स्वामी विवेकानंद का नारी चिंतन

अनीता पटेल
वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता
(एस.आर.एफ.)
हिंदी विभाग
इंदिरा कला संगीत वि0वि0
खैरागढ़ (छ0ग0)
anitapateliksv@gmail.com

12 जनवरी अर्थात् स्वामी विवेकानंद के जन्म दिवस को पूरे भारत में राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में सन् 1984 से मनाया जा रहा है, क्योंकि आजीवन स्वामी जी ने जो जीवन जीया और जो कार्य समाज के लिए किया, वह देश के युवाओं के लिए बहुत ही प्रेरक है। स्वामी जी के विचार बहुत ही प्रगतिशील थे और वे भारतीय समाज के आध्यात्मिक एवं धार्मिक उन्नति से अधिक सामाजिक उत्थान के प्रति सजग थे। स्त्री-विमर्श की जो चर्चा आजकल जोर-शोर से चल रही है, उसके बीज हमें स्वामी विवेकानंद जी के विचारों में बहुत पहले ही देखने को मिलता हैं।

हमारे देश में प्राचीन काल में स्त्रियों को देवी तुल्य समझा जाता था और ग्रंथों में इसके प्रमाण भी मिलते हैं। कहा जाता था 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' अर्थात् जहाँ नारियों की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं, परंतु मध्यकाल आते-आते मानव मूल्यों में ह्रास होता चला गया तथा स्त्रियों को भोग की वस्तु समझा जाने लगा। पहले जहाँ ये अर्द्धांगिनी मानी जाती थीं, वहीं मध्यकालीन समाज में इनका स्थान दासी का हो गया। जब-जब भी समाज में ऐसी नैतिक पतन की स्थितियाँ जन्म लेती हैं, तब-तब किसी न किसी महापुरुष द्वारा इसमें सुधार लाने का प्रयत्न किया जाता रहा है, आधुनिक युग के उन्हीं महापुरुषों में से एक थे स्वामी विवेकानंद जी।

स्वामी विवेकानंद जी नारियों की पूर्ण स्वतंत्रता के पक्षधर थे, उनका मानना था कि स्त्रियों को अपने आस-पास के लोगों से जितना पूर्ण विश्वास मिलेगा, उतना ही वे निर्भय व मुक्त होकर अपने कर्मक्षेत्र में आगे बढ़ सकेंगी। इन्होंने सन् 1893 में सम्पन्न शिकागो विश्वधर्म सभा में भाग लिया तथा स्त्रियों से संबंधित अनेक समस्याओं पर चर्चा भी की। उन्होंने सभी देशों की स्त्रियों की तुलना में भारतीय नारियों को श्रेष्ठ बताते हुए कहा कि- ''हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्या को अपने ढंग से सुलझा सकें। हमारी भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति इसे करने की क्षमता रखती हैं।"[1]

कैलिफोर्निया के शेक्सपियर क्लब हाउस में 18 जनवरी 1900 को संपन्न एक भाषण समारोह में जब विवेकानंद जी से पूछा गया कि स्त्रियों के प्रति आपका दृष्टिकोण क्या है ? तो इस प्रश्न का उत्तर देते हुए स्वामी जी ने कहा - ''मैं ऐसे आश्रम का मनुष्य हूँ, जिसमें विवाह नहीं किया जाता है, इसलिए स्त्रियों का प्रत्येक दृष्टिकोण से मेरा ज्ञान अन्य लोगों की तरह पूर्ण नहीं भी हो सकता। भारत में स्त्री ईश्वर की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति मानी जाती है। स्त्री जीवन के आदर्श का आरंभ और अंत मातृत्व से ही होता है। प्रत्येक हिंदू के मन में 'स्त्री' शब्द के उच्चारण से मातृत्व का स्मरण हो आता है। विश्व में 'माँ' नाम से अधिक पवित्र और निर्मल दूसरा कौन सा नाम है, जिसके पास वासना कभी भटक भी नहीं सकती, यही भारत का और वहाँ की स्त्रियों का आदर्श है।"[2]

वस्तुतः विवेकानंद जी का दृष्टिकोण नारी को माँ के रूप में ही देखने का था, क्योंकि समाज में

सबसे ऊँचा स्थान माँ का ही होता है। भारत की स्त्रियों की बात करते हुए उन्होंने सबका ध्यान आकर्षित करते हुए कहा कि हिंदू स्त्रियाँ विश्व की सभी स्त्रियों से विशिष्ट हैं- ''भारत में अभी तक स्त्रियों में जैसा चरित्र, सेवाभाव, स्नेह, दया, तुष्टि और भक्ति है, पृथ्वी पर और कहीं ऐसा नहीं है। हिंदू स्त्रियाँ बहुत ही आध्यात्मिक और धार्मिक होती हैं, कदाचित् संसार की सभी महिलाओं से अधिक। यदि हम उनकी इन सुंदर विशिष्टताओं की रक्षा कर सकें और साथ ही उनका बौद्धिक विकास भी कर सकें, तो भविष्य की हिंदू नारी संसार की आदर्श नारी होंगी।"[3]

तत्कालीन समाज में फैली हुई कुरीतियों एवं स्त्रियों की चिंताजनक स्थिति देखकर विवेकानंद जी को बहुत निराशा होती थी। उनका मानना था कि ''स्मृति आदि लिखकर, नियम-नीति में आबद्ध करके इस देश के पुरुषों ने स्त्रियों को केवल बच्चा पैदा करने की मशीन बना डाला है। महामाया की साक्षात् मूर्ति इन स्त्रियों का उत्थान न होने से समाज की उन्नति भी असंभव है।"[4] एक शिष्य के यह कहने पर कि कम आयु में विवाह हो जाने पर लड़कियाँ शीघ्र ही गृहकार्य दक्ष और धर्मपरायण हो जाती है। इस पर स्वामी जी ने कहा कि- ''बाल विवाह होने से बहुत सी स्त्रियाँ अल्पायु में ही संतान प्रसव करके मर जाती हैं। पठन-पाठन कराके अधिक उम्र में कुमारियों का विवाह करने से उनकी जो संतान होगी, उसके द्वारा देश का कल्याण होगा। यहाँ पर जो इतनी विधवाएँ हैं, उसका कारण भी बाल विवाह ही तो है। बाल विवाह कम होने से विधवाओं की संख्या भी कम हो जाएगी।"[5]

स्वामी जी तत्कालीन नारियों की स्थिति के प्रति सजग थे, परंतु उनका मानना था कि हमारा हस्तक्षेप करने का अधिकार शिक्षा के प्रचार तक ही सीमित है। जबकि नारियों की बहुत सी गंभीर समस्याएँ हैं, पर उनमें एक भी ऐसी नहीं है जो जादू भरे शब्द 'शिक्षा' से हल न की जा सकें। उनका कहना है कि- ''आखिर किस शास्त्र में ऐसी बात है कि स्त्रियाँ ज्ञान-भक्ति की अधिकारिणी नहीं होगी ? भारत का अधःपतन उसी समय से हुआ, जब से स्त्रियों के अधिकार उनसे छीन लिए गए। वैदिक युग में जब मैत्रेयी, गार्गी आदि विदुषी स्त्रियों को आध्यात्म ज्ञान का अधिकार था, तब फिर आज स्त्रियों को वह अधिकार क्यों न होगा।"6

स्वामी जी का यह भी विचार था कि जब स्त्रियाँ शिक्षित होंगी, तभी तो उनकी संतानों द्वारा देश का भविष्य उज्ज्वल होगा और देश में विद्या, ज्ञान, शक्ति, भक्ति और स्वाधीनता के भाव जागृत होंगे। विवेकानंद जी स्त्रियों की समस्याओं को स्थायी रूप से हल करने की बात करते हुए 'वास्तविक शिक्षा' पर जोर देते थे। वास्तविक शिक्षा से उनका तात्पर्य ऐसी शिक्षा से था जिससे सामाजिक, आर्थिक व मानसिक उत्थान हो सके। उनका कहना था कि सिर्फ सिद्धांतों के रटने से काम नहीं होगा, केवल पूजा पद्धति सिखलाने से काम न बनेगा, बल्कि उन सिद्धांतों को अपने वास्तविक जीवन में लागू भी करना होगा। सभी विषयों में उनकी आँखें खोलना भी उचित होगा। इसके साथ ही नैतिकता, निर्भीकता, स्वार्थशून्यता जैसे मूल्यों के लिए छात्राओं के सामने संघमित्रा, अहिल्याबाई, मीराबाई जैसी आदर्श नारी चरित्र सर्वदा रखकर त्यागरूपी व्रत में उनका अनुराग उत्पन्न कराना होगा।

स्वामी विवेकानंद स्त्री-पुरुष में से किसी एक की सत्ता न मानकर दोनों की समानता के पक्षधर थे। उनका मानना था कि हमारा ईश्वर सगुण और निर्गुण दोनों है। निर्गुण रूप में पुरुष है और सगुण रूप में नारी। उन्हीं के शब्दों में – "परमब्रह्म तत्व में लिंग भेद नहीं है, इसलिए मैं कहता हूँ कि स्त्री-पुरुषों में बाह्य भेद होते हुए भी स्वरूप में कोई भेद नहीं है।"[7]

तत्कालीन समाज में नारी की स्थिति एवं सम्मान को लेकर भी स्वामी जी चिंतित थे और इसके निराकरण का सबसे प्रभावी साधन उन्होंने शिक्षा को माना। वे वेदांत की विचारधारा से प्रभावित थे और उसका प्रयोग उन्होंने व्यवहारिक रूप में भी किया, जिसमें सिर्फ आत्मा की सत्ता है, न स्त्री, न पुरुष, न धर्म, न जाति। उन्होंने सिर्फ मानव मात्र की कल्पना की, इसलिए उनके विचार स्त्रियों के प्रति एक ऐसे मानवमूल्य की स्थापना के लिए थे, जिससे समाज में स्त्री और पुरुष दोनों की समान भूमिका बनी रहे।

संदर्भ सूची

1. विवेकानंद साहित्य, कलकत्ता: प्रकाशक - बुधानंद अद्वैत आश्रम, द्वितीय संस्करण - फरवरी 1973, चतुर्थ खण्ड, पृष्ठ - 267

2. विवेकानंद साहित्य, प्रथम खण्ड, पृष्ठ - 307

3. वही, पृष्ठ - 324

4. विवेकानंद साहित्य, षष्ठ खण्ड, पृष्ठ - 181

5. वही, पृष्ठ - 39-40

6. वही, पृष्ठ - 181

7.वही, पृष्ठ - 185